ओ३म्

सुधारक

गुरुकुल झज्जर का लोकप्रिय मासिक पत्र

वर्ष 68 अंक 9 अप्रैल 2021 चैत्र 2077 वार्षिक मूल्य 150 रु०

मुम्बई में चैत्र शुक्ला पञ्चमी को स्थापित आर्यसमाज के संस्थापक
महर्षि दयानन्द सरस्वती

संस्थापक : स्व० स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
प्रधान सम्पादक : आचार्य विजयपाल
सम्पादक : विरजानन्द दैवकरणि
व्यवस्थापक : ब्र० साहिल आर्य

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

उत्सव प्रारम्भ समय ईश्वर स्तुति प्रार्थना करते हुए गुरुकुल के ब्रह्मचारी

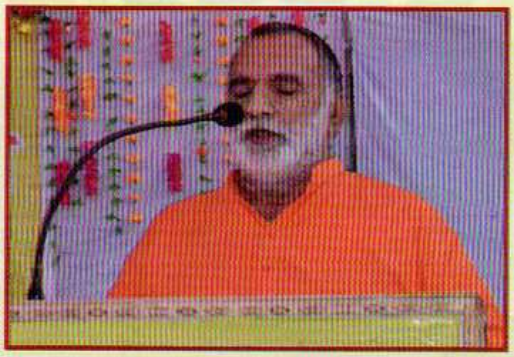

उत्सव का कार्यक्रम प्रारम्भ करते हुए आचार्य विजयपाल योगार्थी

डॉ० सुरेन्द्र कुमार हुड्डा वैदिक सन्देश देते हुए

डॉ० जयभारती स्वास्थ्य सन्देश देते हुए

डॉ० आनन्द कुमार आई.जी. जनता को राज्यव्यवस्था समझाते हुए

स्वामी विज्ञानन्दजी धर्मोपदेश देते हुए

सत्यवीर जी शास्त्री जनता को उद्बोधन करते हुए

यज्ञ के ब्रह्मा डॉ० जगदेव जी यज्ञ की महिमा बताते हुए

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

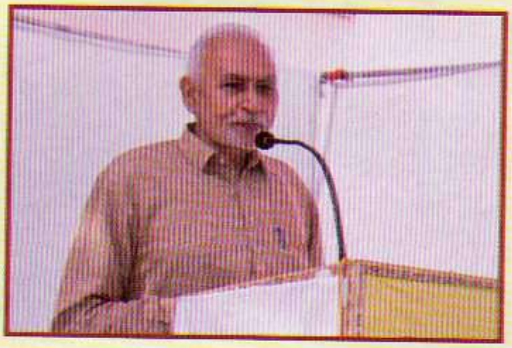

मंच का संचालन करते हुए श्री राजवीरसिंह लिकारा

डॉ० महावीर मीमांसक वेद व्याख्या करते हुए

डॉ० योगानन्द शास्त्री इतिहास की समस्या सुलझाते हुए

स्वामी सम्पूर्णानन्द जी सामाजिक सुधार हेतु मत व्यक्त करते हुए

अभिनन्दन प्राप्ति का आभार व्यक्त करते हुए डॉ० स्वामी देवव्रत जी

उत्सव में पधारी जनता को धन्यवाद देते हुए
आचार्य विजयपाल योगाचार्य

स्वागत प्राप्ति पर धन्यवद करते हुए विरजानन्द दैवकरणि

डॉ० वीरदेव विष्ट अमेरिका वाले का सन्देश सुनते
हुए डॉ० राजवीर शास्त्री

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

स्वामी वेदवागीश स्मृति स्मारिका और डॉ० वीरदेव बिष्ट का परिचय देते हुए डॉ० जगदेव विद्यालंकार

डॉ० राजकुमार जी दान सूची सुनाते हुए

गुरुकुल खानपुर के आचार्य श्री प्रद्युम्न जी उपदेश देते हुए

ब्रह्मचारी सन्नी भाषण देते हुए

स्वामी प्रणवानन्द जी का स्वागत करते हुए चौ० पूर्णसिंह जी देशवाल

स्वामी वेदानन्द वेदवागीश स्मारिका का विमोचन करते हुए स्वामी प्रणवानन्द जी आदि मान्य सज्जन

सबसे छोटे ब्रह्मचारी के द्वारा विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका का सम्मान प्राप्त करते हुए स्वामी प्रणवानन्द जी

विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका की ओर से वृद्ध महिला द्वारा स्वामी देवव्रत जी का सम्मान किया गया

वैदिक विनय

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि।
ओजोऽस्योजो मयि धेहि
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।
सहोऽसि सहो मयि धेहि

यजु० १९.९।।

विनय

हे सोम! तू तेज:स्वरूप है, तू मुझमें तेज को धारण कर। तेजस्विता, उग्रता के बिना जीते मैं प्रलोभनों को नहीं जीत सकता और प्रलोभनों को जीते बिना मैं शारीरिक वीर्य का भी संरक्षण नहीं कर सकता। इसलिये तेज को देकर, हे वीर्य के भंडार, तू मुझ में वीर्य को धारण करा, मुझे ऊर्ध्वरेता बना, मेरे सब अंगों में नवजीवन की स्फूर्ति उत्पन्न करा, जिससे मैं सच्चे बल को धारण कर सकूं। तू तो वह बल है, संसार के सब बल-हस्तिबल, विद्युत्बल, पृथ्वी आदि को धारण करने का इन्द्रबल तक सब बल-तेरे ही सेवन से प्राप्त होते हैं। तो, मैं निर्बल तेरे सिवाय और कहां से बल की याचना करूं? बलहीन रहकर मैं आत्मा को नहीं पा सकता, कभी ओज को, आत्मिक तेज को नहीं प्राप्त कर सकता। अत: मुझे बली बनाकर, हे ओजोमय! तू मुझ ओज भी प्रदान कर। जब मुझ में ओज आ जाएगा, आत्म तेज समा जायेगा तो हे मृत्युरूप! मुझ में भी पाप के दलन के लिये, अन्याय के विध्वंस के लिये स्वभावत: मन्यु प्रदीप्त हुआ करेगा, यह रागद्वेष रहित प्रशान्त आत्म ज्वलन प्रकट करता हुवा करेगा जिसके उदय होने पर सब पाप असत्य विलीन हो जाता है। परन्तु साथ ही, हेसह:स्वरूप! तू मुझे आत्मा की यह सह:शक्ति भी प्रदान कर जिससे मैं घोर से घोर मुसीबतों को भी हंसता हुवा सह सकूं। उस तपस्या की शक्ति को धारण करा जिसके सामने कोई विरोधिनी शक्ति नहीं ठहर सकती, जिसके होने पर असह्य से असह्य विपत्तियां खेल हो जाती हैं और जिसकी अग्नि में कठोर से कठोर हृदय भी पिघल जाते हैं। इस प्रकार हे सोम! तुझे अपने में बसाकर, तेरा पान करके मैं स्थूल तेज से लेकर तपस्या के तेज तक तेरे सब तेजों को प्राप्त कर लेऊं, हे सोम! तेरे छओं सामर्थ्यों को अपने में धारण कर सोममय होऊं।

शब्दार्थ-

(तेज:) तू तेज (असि) है, (तेज:) तेज को (मयि) मुझ में (धेहि) धारण करा। (वीर्यं) तू वीर्य (असि) है (वीर्यं) वीर्य को (मयि) मुझ में (धेहि) धारण करा। (बलं) तू बल (बलं) बल को (मयि) मुझ में (धेहि) धारण करा। (ओज:) तू ओज (असि) है (ओज:) ओज को (मयि) मुझमें (धेहि) धारण करा। (मन्यु:) तू मन्यु (असि) है (मन्युं) मन्यु को (मयि) मुझमें (धेहि) धारण करा। (सह:) तू सह (असि) है, (सह:) सह को (मयि) मुझमें (धेहि) धारण करा।

सम्पादकीय

देर से उठाया गया एक सही कदम

जब से आर्यसमाज की स्थापना हुई है, उसके कुछ समय पश्चात् ही इसमें पदप्राप्ति हेतु कलह प्रारम्भ हो गया था। अजमेर के कमल नयन शर्मा आदि ने महर्षि दयानन्द जी के सामने इस विषयक पत्र व्यवहार भी किया था। किन्तु कुछ लोगों की संकीर्ण मानसिकता के कारण कलह की यह परम्परा आज तक भी चली आ रही है। देश विदेश में स्थित आर्यसमाज, आर्य प्रतिनिधि सभायें तथा भारत की प्रादेशिक और सार्वदेशिक सभायें भी इस रोग से ग्रस्त हैं। इनके कलह को समाप्त करने तथा वैमनस्य मिटा कर एकरूपता लाने का प्रयास कुछ प्रबुद्ध और निस्स्पृह व्यक्ति समय-समय पर करते रहे हैं, परन्तु पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हो पाई।

अब गुरुकुल झज्जर के १०५ वें वार्षिकोत्सव पर सार्वदेशिक सभा के एक पक्ष के प्रधान श्री स्वामी आर्यवेश जी को सार्वदेशिक सभा के दूसरे पक्ष के उपप्रधान आचार्य विजयपाल योगार्थी ने निमन्त्रित करके विचार भेद को समाप्त करने का उचित पग बढाया है, चाहे विलम्ब से ही सही, परन्तु प्रयास तो स्तुत्य है। यह एकता का बीज वपन उचित ही फल प्रदान करेगा। इस शुभ कार्य से देश-विदेश के सभी आर्यसमाज तथा प्रतिनिधि सभायें यदि शिक्षा लेकर तदनुरूप आचरण करेंगे तो आर्यसमाज के शुभ दिन प्रारम्भ होने में कोई देर नहीं लगेगी।

जब प्रबुद्ध व्यक्ति स्वार्थ त्याग कर आर्यसमाज की उन्नति के लिए कटिबद्ध हो रहे हैं तो स्वार्थी और पदलोलुप व्यक्तियों को भी इस ओर कदम उठाने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। यदि इस पर भी उनकी मानसिकता नहीं बदलेगी तो सामाजिक घृणा उन्हें विवश कर देगी और उन्हें सामाजिक बहिष्कार और निन्दा का पात्र बनना पड़ सकता है।

एकता के इस प्रयास में श्री स्वामी धर्मानन्द जी उड़ीसा, श्री स्वामी प्रणवानन्द जी दिल्ली, श्री सुरेश जी अग्रवाल, श्री विट्ठलराव जी आर्य, प्रसिद्ध उद्योगपति श्री अशोक जी चौहान, श्री धर्मपाल जी आर्य प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली, श्री विनय जी आर्य मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली, श्री विद्यामित्र जी ठुकराल दिल्ली, श्री प्रेमपाल जी शास्त्री दिल्ली, श्री मा० रामपाल जी आर्य प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभ हरयाणा, श्री कन्हैयालाल जी आर्य गुड़गांव, श्री सुदर्शन जी शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब इत्यादि सज्जनों का सहयोग लिया जा सकता है।

अथवा जिस आर्यसमाज या सभा में विवाद या मतभेद के कारण दो-दो आर्यसमाज अथवा सभायें हैं, उनसे भी सम्पर्क किया जाना लाभदायक सिद्ध हो सकता है। चेष्टा यही होनी चाहिये कि हठ दुराग्रह और स्वार्थ

की भावना न हो। पहले भी इस विषय में प्रयास होते रहे हैं, कोई स्वामी अग्निवेश को पसन्द नहीं करता था, कोई श्री सत्यव्रत सामवेदी को बाधक मानता था। अब तो ये दोनों महानुभाव भी नहीं रहे। डॉ. सोमदेव जी मुम्बई ने भी एक बार यत्न किया था, वह भी सफल नहीं हो पाया। असफलता मिलने पर हताश होकर बैठना अनुचित है, सफलता के लिए सतत प्रयास करते रहने पर एक समय अवश्य ऐसा आता है जब सब बाधाएं दूर होकर सफलता प्राप्त हो ही जाती है।

यदि सद्भावना पूर्वक प्रयास करने पर भी कोई व्यक्ति नहीं मानता तो उसे आर्यसमाज की वेदी से धर्मोपदेश देना या वेद की बातें करने का कोई अधिकार नहीं है। आर्यको अपने जीवन में दोहरी चाल नहीं चलनी चाहिये। जो व्यक्ति बाधा बनेगा उसे इतिहास में कलंकित व्यक्ति के रूप में लिखा जायेगा। इतिहास कभी भी किसी को क्षमा नहीं करेगा। जिन्होंने देश या समाज के साथ गद्दारी की, उनके नाम आज इतिहास में कलंक के रूप में लिखित हैं, उनके नाम पर आज अपनी सन्तान का नाम भी नहीं रखता। अत: आर्यसमाज का हित इसी में है कि हम स्वार्थ ईर्ष्या, पदलोलुपता को त्याग कर एक विचार वाले होकर जनता के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करें, इसीमें आर्यसमाज का भला है।

-विरजानन्द दैवकरणि
९४१६०५५७०२

आर्यसमाजस्थापना के १४७वें वर्ष पर प्रस्तुत

आर्यसमाज स्थापना तिथि विषयक महर्षि दयानन्द का पत्र

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्य: श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुखादिभ्यो दयानन्दसरस्वती स्वामि न आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति, तत्राप्यस्तुतमाम्। आगे मुम्बई में चैत्र शुद्ध ५ शनिवार के दिन संध्या के साढे पांच बजते आर्यसमाज का आनन्दपूर्वक आरम्भ हुआ। ईश्वरानुग्रह से बहुत अच्छा हुआ। आप लोग भी वहां आरम्भ कर दीजिये। विलम्ब मत कीजिये। नासिक में भी होने वाला है। अब आर्यसमाजार्थ (नियम) और संस्कार विधान का पुस्तक वेदमन्त्रों से बनेगा शीघ्र। इन्दुप्रकाशवाले विष्णुशास्त्री सुधारेवाला तो नहीं, किन्तु कुधारेवाला मालूम पड़ता है। उसका प्रत्युत्तर करके उसके पास भेजा था, परन्तु उसने नहीं छापा। इससे पक्षपात भी दीखता है। अब वह अन्यत्र छपवाया जायेगा। संध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञविधान का भाष्य सहित पुस्तक यहां छपवाया गया है। सो १० पुस्तक आपके पास भेजा जाता है। यथायोग्य उत्तम पुरुषों को बांट देना। उन नियमों में दो नियम बढे हैं। सो एक-विवाहादि उत्साह किंवा मृत्यु अथवा प्रसन्नता समय जो कुछ दान-पुण्य करना उसमें से श्रद्धानुकूल आर्यसमाज के लिये अवश्य देना चाहिये। और दूसरा नियम यह है कि जब तक नौकरी

करने वाला तथा नौकर रखने वाला आर्यसमाजस्थ मिले तब तक अन्य को (न) रखना और न राखना। और यथायोग्य व्यवहार दोनों रखें। प्रतिपूर्वक काम करें और करावें। डाकतर माणिकजी ने आर्यसमाज होने के लिये स्थान दिया है, परन्तु संकुचित है सो जब बहुत बढेंगे मिंबर तब दूसरा नया बनेगा, किंवा कोई अन्य ले लिया जायेगा। अत्यन्त आनन्द की बात है कि आप लोगों के ध्यान में स्वदेशहित की बात निश्चित हुई है। परमात्मा के अनुग्रह से उन्नति इसकी होय।

संवत् १९३१ मिती चैत्र शुद्ध ६ रविवार ।

टिप्पणी- मुम्बई आर्यसमाज की स्थापना चैत्र शुक्ला ५ सं० १९३२ (१० अप्रैल १८७५) को हुई थी, यह उपर्युक्त लेख से स्पष्ट है। ऋषि दयानन्द केजीवन चरित्र--लेखक पंडित लेखराम जी तथा देवेन्द्रनाथ जी आदि ने यही तिथि लिखी है। इस तिथि की पुष्टि बम्बई आर्यसमाज की प्रारंभिक ११ मास की मुद्रित संक्षिप्त कार्यवाही से भी होती है "श्री आर्यसमाज स्थापना सं० १९३९ ना चैत्र शुद्ध शनिवार" स्पष्ट लिखा है (यहां संवत् १९३१ गुजराती पंचागानुसार है)। इस कार्यवाही के मुखपृष्ठ पर मुद्रणकाल "संवत् १९३२ ना माहा वद०। सन् १८७६" (अर्थात् संवत् १९३२ माघ बदी) छपा है। आर्यसमाज स्थापना दिवस के सम्बन्ध में इस समय जितनी भी पुरानी सामग्री मिलती है, उसमें यह सब से पुरानी और विश्वसनीय है। हमें यह कार्यवाही उक्त आर्यसमाज के कार्यकर्ता हमारे मित्र श्री पंडित पद्मदत्त जी की कृपा से २ अक्टूबर १९५२ को बम्बई में देखने को प्राप्त हुई। सन् १९३९ के पश्चात् सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा 'चैत्र शुक्ला १' को आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाने की जो प्रतिवर्ष घोषणा होती है, उसका एकमात्र आधार मुम्बई आर्यसमाज मन्दिर पर लगा हुआ जाली शिलालेख है। इस भवन का निर्माण आर्यसमाज स्थापना के ७ वर्ष के अनन्तर हुआ था, यह भी वहीं लगे अन्य शिलालेखों से स्पष्ट है। हमारे विचार में आर्यसमाज स्थापना दिवस वाला शिलालेख और भवन निर्माण काल वाले शिलालेख सर्वथा भ्रान्तिपूर्ण और अशुद्ध हैं।

-युधिष्ठिर मीमांसक

११ अप्रैल १८७५। यहां गुजराती पंचांग के अनुसार संवत् १९३१ ठीक है।

आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय
आबू पर्वत
के संस्थापक, अनेक युवकों के
निर्माता, महर्षिमिशन के मिशनरी,
योगपथ के पथिक, आर्ष परम्परा के
गौरव, त्यागी-तपस्वी स्वर्गीय **स्वामी**
धर्मानन्द जी सरस्वती जी
को गुरुकुल झज्जर परिवार की ओर
से विनम्र श्रद्धांजलि.....

० जो पूर्ण वेद और परमात्मा को जानने वाले धर्मात्मा सब जगत् के उपकारक पुरुषों से द्वेष करेगा वह अवश्य नष्ट होगा।
० दुष्ट व्यसन में फंसने से मर जाना अच्छा।

❋ अमूल्य वचन ❋

प्रस्तुतकर्ता–मेजर रतनसिंह यादव (सेवानिवृत्त)

१. युवावस्था को भागदौड़ को सफेद बाल बता रहे हैं। शरीर में झुर्रियां लटक रही हैं जैसे कि शरीर के सभी अंगों की वासनायें–लालसा निकल चुकी। क्या यह मेरा ही शरीर है, ऐसे जीर्ण–शीर्ण शरीर के अंग देख कर मन में भ्रमहोता है। गर्दन हिल–हिल कर मानो यह कह रही है कि इस दुनिया में कुछ नहीं है।

२. जीवन बहुमूल्य है, प्रत्येक दिन एक उपहार है। प्रत्येक क्षण का ऐसा आनन्द लजिये मानो यह आपके जीवन का अन्तिम क्षण है। अपने स्नेहीजनों को अपनी प्रसन्नता में सम्मिलित कीजिये। उनसे अपने दिल की बात कीजिये। अपना समय उनके साथ बांटिये। कुछ भी सदा रहने वाला नहीं है। जीवन बहुत तेजी से भाग रहा है। जो क्षण बीत चुका है, उसे आप वापिस नहीं ला सकते। जब आपत्ति आपके पैर उखाड़ने लगे तो मुस्करा कर खड़े हो जाइये और याद कीजिये कि जीवन बहुत मधुर है। प्रात:काल जब आप जागें तो उसी समय यह सोचें कि आज का दिन बहुत अच्छा होगा, उसे अच्छा ही रहने दें।

३. किसी को भी आपकी प्रसन्नता पर हिमपात करने का अधिकार नहीं है। उदासी को अपने ऊपर न छानें दें। ऐसे तो सारा ही दिन बर्बाद हो जायेगा। कोई तथाकथित बुद्धिमान्, कोई प्रतिभाशाली, कोई बुद्धिजीवी, कोई आत्महन्ता, कोई मीन–मेख निकालने वाला, कोई नुक्ताचीनी करने वाला हो, इनकी कोई आवश्यकता नहीं है। कोई बाह्य शक्ति आपसे बढ़कर नहीं है, जब तक आप स्वयं ऐसा न मान लें। आपका समय बहुमूल्य है, इसे घृणा, शत्रुता, वैमनस्य, ईर्ष्या जैसी बातों पर नष्ट न होने दें। थोड़े से झटके से बिखर जाने वाला अपना जीवन सावधानी से बितायें। यह प्रभु ही है जो मानव के फूल जैसे सुन्दर जीवन की रचना करता है, परन्तु कोई भी मूर्ख इसे नष्ट कर सकता है।

४. वैदिक धर्म के अनुयायियों को मृत्यु से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। हम अजर, अमर हैं। पर्वत के उच्च शिखर पर चढने के पश्चात् ढलान आता है। व्यक्ति वहां पहुंचकर थोड़ा विश्राम भले ही कर ले, पर बैठे नहीं रह सकते। क्योंकि चलना ही जीवन की निशानी और रुकना मौत की निशानी। ऐतरेय ब्राह्मण कहता है– चरैवेति चरैवेति।

५. हमने जीवन का खूब समर्थन किया तो आगे मृत्यु को स्वीकार करने के लिये तैयार रहना चाहिये। एक बार शक्तिशाली भूमिका में रहने के पश्चात् उसे छोड़ पाना कठिन तो है, पर यह सोचकर कि जीवन एक मोहक भ्रम है, छोड़ देना ही श्रेयस्कर है।

६. जीवन में असफल लोगों में अधिकतर वे हैं, जिन्हें यह ज्ञात नहीं था कि जब उन्होंने हार मानी तो वे सफलता के कितने निकट थे।

७. सुदृढ सम्बन्धों का आधार विश्वास है।

८. जो किसी की बात को लेकर खड़े नहीं हो सकते, वे किसी भी बात को लेकर गिर भी सकते हैं।

प्रसिद्ध क्रान्तिकारी तात्या टोपे का बलिदान

-वीर दामोदर सावरकर

[अंग्रेजों को अनेक बार चकमा देकर पराजित करने वाले वीर को देशद्रोही ने धोखे से अंग्रेजों के हाथ में पकड़वा कर मरवाया]

२५ दिसम्बर को तात्या टोपे बाँसवाड़ा के वनखण्ड से बाहर आया। उसी समय अवध का प्रख्यात वीर शाहजादा फिरोजशाह भी अपनी सेना सहित तात्या की सहायता करने के लिए आ रहा था। स्थानाभाव के कारण यहां फिरोजशाह ने गंगा और यमुना को पार कर जिस प्रचंड शौर्य का प्रदर्शन किया उसका विवरण प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। शिंदे के एक दरबारी मानसिंह, फिरोजशाह, तात्या एवं राव साहब की १३ जनवरी, १८५९ को इंद्रगढ़ में भेंट हुई। इन चारों नेताओं ने यहाँ एकत्रित होकर आगामी कार्यक्रम पर विचार-विमर्श किया। अंग्रेजों की साधारण सी गतिविधियों की सूचना भी तात्या को मिलती रहती थी। जब उसे यह विदित हुआ कि अंगेज पुन: चारों ओर से घेरा डालते आ रहे हैं तो वह बड़ी निर्भीकता से मंजिल तय करता हुआ देवास जा निकला। किन्तु वहां भी वह चारों दिशाओं से बढ़ी आ रही अंग्रेज सेनाओं के मुंह में घिर गया। अब उसकी यश-प्राप्ति की आशा तो किंचित् मात्र भी नहीं रह गई थी, अत: कोई साहसी योजना बनाने का विचार करना ही निरर्थक था। अब उसके लिए अपनी थकी हुई सेना को अंग्रेजों की इस व्यूह-रचना से निकाल पाना ही कठिन हो गया था। अंग्रेज सेनापति भी दंभ से अकड़े हुए यह घोषणा कर रहे थे कि ''देखें, अब यह कैसे बचकर निकलता है।'' अब तो क्रान्तिकारियों के चारों नेता फिरोजशाह, मानसिंह, तात्या टोपे और राव साहब पर अंग्रेजों ने अपना जाल पूर्णरूपेण कस दिया था। १६ जनवरी, १८५९ को तात्या, राब साहब तथा फिरोजशाह आगामी योजना पर विचार-विमर्श कर ही रहे थे कि बाहर कुहराम मच गया। तात्या ने तत्काल अनुमान लगाया कि अब उन्हें अंग्रेजों ने पूर्णत: घेर लिया है। उसने बाहर आकर देखा कि सम्पूर्ण छावनी में गोरों ने कुहराम मचा दिया है। गोरे सैनिक आनंद से झूमते हुए चीख उठे, ''तात्या मिल गया।'' किन्तु उनकी वह चिल्लाहट क्षण भर में ही लुप्त हो गई। वे यही कहते रह गए कि अभी-अभी तो वह यहां था, अब कहां खिसक गया? 'दौड़ो सैनिको, दौड़ो और खोजो' की चीख ही सुनाई पड़ी, किन्तु तात्या कहीं न मिला। अंग्रेज सैनिकों की पूर्ण सतर्कता भी तात्या टोपे की चाल के समक्ष निढाल हो गई। तात्या मानो पंख लगाकर उड़ गया और अंग्रेज सैनिक और सेनापति क्रोध से सिर पटककर ही रह गए।

अब २१ जनवरी राव साहब, फिरोजशाह और तात्या अपने अन्य सहयोगियों सहित अलवर के समीप सीकर नाम ग्राम में

उपस्थित हुए। अंग्रेज पुन: पागल होकर उनका पीछा करने में लग गए। अंग्रेज सेनापति होम्स की सेनाओं और कांन्तिकारियों में मुठभेड़ हुई, जिसमें क्रान्तिकारी पराजित हो गए। किन्तु इस पराजय ने क्रांतिकारियों को हताश नहीं किया, क्योंकि उनकी विजय की आशाएं तो पहले ही नष्ट हो चुकी थी। किन्तु अब उनमें प्रतिकार की शक्ति नहीं रह गई थी। नर्मदा को पार कर बड़ौदा पर आक्रमण करने की तात्या की योजना भी अब समाप्त हो गई थी। अब तात्या और राव साहब ने अपनी छापामार युद्धकला में कुछ सुधार करने के संबंध में विचार-विमर्श किया और कुछ निश्चय करने के पश्चात् तात्या और राव साहब ने अपनी सेनाओं से विदाई ले ली। तात्या के साथ केवल दो अश्व, एक टट्टू, दो ब्राह्मण रसोइए और एक नौकर था। अपने इस परिवार के साथ वे ग्वालियर के सरदार मानसिंह के पास पहुंचे। सरदार मानसिंह उन दिनों पारौन के वनों में शरण ले रहा था। मानसिंह ने उससे कहा,''तात्या, तुमने अपनी सेना को छोड़कर यहां आने में भूल की है।'' तात्या ने उत्तर दिया, ''चाहे अच्छा हुआ अथवा बुरा, मैं तो अब तुम्हारे साथ ही रहने का निश्चय करके आया हूं। अब तो मैं इन प्राणलेवा पलायनों से बहुत अधिक थक गया हूं।''

अंग्रेजों को भी यह सूचना मिल गई कि तात्या टोपे मानसिंह के पास रह रहा है। अंग्रेज प्रत्यक्ष युद्ध में उसे बंदी बनाने में असफल हो चुके थे। अत: उन्होंने छल-कपट के नीच हथकंडों को अपनाने की योजना बनाई। उन्होंने अपना दूत भेजा और उसके माध्यम से यह कहलवाया कि यदि मानसिंह तात्या को पकड़वा दे तथा आत्मसमर्पण कर दे तो उसे क्षमा प्रदान की जा सकती है। इतना ही नहीं, शिंदे से यह भी कहा जाएगा कि वह नरवर राज्य उसे दे दे। इसी मानसिंह ने पहले अपने चाचा को भी अंग्रेजों को सौंप देने की कायरता प्रदर्शित की थी। वह इस प्रलोभन में फंसकर अंग्रेजों के झाँसे में आ गया। उसने तात्या को बताया कि वह अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण कर देगा। जब तात्या से भी उसने आत्मसमर्पण कर देने का आग्रह किया तो वीरवर तात्या ने उसके इस प्रस्ताव को घृणा सहित ठुकरा दिया। उसी समय फिरोजशाह का एक पत्र भी तात्या को मिला था, जिसमें उसने तात्या को अपनी छावनी में आ जाने का निमंत्रण दिया था। तात्या ने यह पत्र मानसिंह को दिखाया और उससे परामर्श किया कि ''मैं वहां जाऊँ अथवा नहीं, इस संबंध में तुम्हारे परामर्श के अनुसार ही कार्य करूंगा।'' किन्तु नीच मानसिंह ने उससे कहा कि ''आपको अभी कुछ दिनों तक यहीं ठहरना चाहिये, फिर इस संबंध में निश्चय कर लिया जायेगा।'' तात्या ने ताड़ लिया कि मानसिंह को अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण करना है, किन्तु इस पर भी वह यह समझता है कि मेरे संबंध में मानसिंह की नीयत में कोई अन्तर नहीं आ पाया है। मानसिंह ने उससे कहा कि ''मेरे वापस लौटने तक आप उस स्थान पर रहो जहां मेरा एक व्यक्ति आपको ले जायेगा।'' उसक द्वारा बताए गए स्थान को सुरक्षित समझकर तात्या टोपे तीन दिन तक

वहां रहा। तीसरा दिन हुआ और सहस्रों युद्धों में शत्रु को नाकों चने चबवाने वाला वीर मराठा सेनानी, जा अब तक अनेक प्राणघातक संकटों और कष्टों में भी अपनी चतुरता और रण-कौशल के कारण शत्रुओं के हाथ नहीं आ पाया था, उस विश्वासघाती मानसिंह द्वारा ही बंदी बनवा दिया गया।

मानसिंह तात्या को वहां रहने का परामर्श देकर सीधा अंग्रेजों की शरण में गया था। उन्होंने तात्या को बंदी बनाने के लिये बंबई की अंग्रेजी सेना को इस विश्वासघाती के साथ भेजा था। तात्या के प्रति प्रत्येक भारतीय के मन में जो महान् आदर भावना विद्यमान थी, उसके कारण अंग्रेज किसी भारतीय पर विश्वास नहीं कर पाते थे। अत: बंबई के उन सैनिकों को केवल इतना निर्देश दे दिया गया था कि "मानसिंह जिस अभियुक्त को बंदी बनाने का निर्देश दे उसे तुम्हें बंदी बनाकर ले आना होगा।" मानसिंह उन सैनिकों सहित पारौन के वनखंड में जा पहुंचा। तात्या को उसने तीन दिन पश्चात् ही वापस आने की बात कही थी और वह अपने कथनानुसार ठीक समय पर वापस आ पहुंचा था। जिस स्थान पर मानसिंह द्वारा साथ भेजे गए आदमी द्वारा तात्या को ले जाया गया था, तात्या वहां विश्राम कर रहा था और जिस समय मानसिंह वहां पहुंचा उस समय वह प्रगाढ़ निद्रा में लीन था। नराधम मानसिंह ने अपने साथ लाए हुए शिकारी कुत्तों को इस नर केसरी पर छोड़ दिया था। तात्या के नेत्र जब खुले तो उसने अपने आपको अंग्रेजों के बंदी के रूप में पड़ा हुआ देखा।

यह घटना ७ अप्रैल, १८५९ को अर्धरात्रि में घटित हुई। दूसरे दिन प्रात:काल ही उसे शिवपुरी में जनरल मीड की छावनी में कड़े पहरे के बीच ले जाया गया। यहाँ सैनिक न्यायालय लगा और उसमें तात्या के विरुद्ध विद्रोह करने का आरोप लगाया गया। बुधवार को इन आरोपों का उत्तर देते हुए तात्या ने कहा-"मैंने जो भी कार्य किया है, अपने स्वामी के निर्देशानुसार किया। तदुपरांत मैंने राव साहब का आदेश माना। न्याय के अनुसार लड़े गए युद्धों अथवा मुठभेड़ों को छोड़कर मैंने अथवा नाना साहब ने एक भी यूरोपियन पुरुष, स्त्री अथवा बालक की निरर्थक हत्या नहीं की और न ही किसी को फांसी पर लटकाया। इससे अधिक मैं इस न्यायालय के समक्ष अन्य कोई बात कहने को तैयार नहीं हूँ।" अंग्रेज के विशेष अनुरोध पर तात्या ने क्रांति के पुनीत प्रारंभ से लेकर उस दिन तक की घटनाओं का प्रतिदिन का वृत्त भी संक्षेप में बता दिया। लिपिक ने उसके द्वारा दिए गए सम्पूर्ण विवरण को लिपिबद्ध कर लिया। तदुपरांत इस दैनिक कार्यक्रम और वक्तव्य को पढ़कर सुनाया गया और उसे सुनने के पश्चात् तात्या टोपे ने उसके नीचे सुन्दर रोमन अक्षरों में लिख दिया- TATIA TOPE। किन्तु अंग्रेजों द्वारा उससे जो प्रश्न पूछे गये उनका उत्तर उसने नितांत ही संक्षेप में, हिन्दी में ही अपनी ओजस्वी भाषा में दिया। जब अंग्रेजी में उससे कोई प्रश्न पूछते थे तो वह बड़ी ही शांतिपूर्ण मुद्रा में उसका उत्तर देता था, "मुझे पता नहीं।"

तीन दिन तक तात्या से इसी प्रकार पूछताछ की जाती रही। भारतीयों के झुंड-के-झुंड इस महान् वीर के दर्शनार्थ एकत्र होते थे, किन्तु उन्हें दर्शन करने से वंचित रखा जाता था। जिनको उसके दर्शन की अनुमति प्राप्त हो जाती थी वे बड़े ही आदर सहित नतमस्तक होकर उसका अभिवादन करते थे। जिस समय अंग्रेजों ने तात्या को सूचित किया कि सैनिक न्यायालय उसके मामले में निर्णय देगा तो उसी समय उन्होंने यह भी कहा था कि वह अपने बचाव के लिये भी आवश्यक प्रमाण संगृहीत कर ले। उसी समय इस महा वीर क्रांति योद्धा ने अंग्रेजों को एक ही उत्तर दिया, ''मैंने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया है और मैं भली भांति जानता हूं कि मुझे आत्माहुति देने के लिये तत्पर रहना चाहिये। मुझे तुम्हारे न्यायालय के निर्णय अथवा जांच से कोई सरोकार नहीं है।'' इस वीर मराठा के हाथों में हथकड़ियां पड़ी हुई थी, किन्तु इस पर भी अपने हाथों को ऊँचा करते हुए इस महान् योद्धा ने घोषणा की-''इन हथकड़ियों से मुक्त होने की मुझे एकमात्र आशा यही है कि तोप का गोला या फांसी का फंदा चूमते ही ये दूर हो जाएंगी। परन्तु मैं तुम्हें एक बात बता देना चाहता हूँ कि ग्वालियर में मेरा परिवार रह रहा है और उसका मेरे इन कार्यों से तनिक सा भी संबंध नहीं है। अत: मेरे कार्यों के बदले मेरे पिता जी अथवा पारिवारिक जनों को तनिक सा भी त्रास देना उचित नहीं होगा।''

जांच पड़ताल और पूछताछ का नाटक समाप्त हो गया। दोपहर के चार बजे थे। तात्या टोपे को फांसी का दण्ड सुना दिया गया। दोपहर के चार बजे थे कि उसे तीसरी बंगाल गोरी सेना के कड़े पहरे में वध-स्तंभ के पास लाया गया। फांसी के तख्ते के समीप आने पर सैनिकों ने व्यूह बनाकर इस महान् सेनानी को चारों ओर से घेर लिया। इस अवसर पर भारतीय पैदल सैनिक, अश्वारोही तथा अन्य दर्शकों की एक भारी भीड़ वहां एकत्र हो गई थी। तात्या ने अंग्रेजों से पुन: एक बार आग्रह किया कि उसके वृद्ध पिताजी को किसी प्रकार से भी त्रस्त न किया जाए। तात्या को दंड सुना दिया गया। तात्या के पैरों में पड़ी बेड़ियाँ काट दी गईं। वह नरपुंगव निस्संकोच होकर धीरे-धीरे वध-स्तंभ तक पहुंचा और बड़ी ही तीव्र गति से सीढ़ियों पर जा चढ़ा। नियमानुसार अब वधिक उसके हाथ-पैर बांधने के लिए वहां पहुंचे। उस समय तात्या ने हंसते हुए उन्हें कहा, ''ऐसा करने की किंचित् मात्र भी आवश्यकता नहीं है।'' यह कहकर उसने स्वयं फांसी के फन्दे को हार क समान अपने गले में पहन लिया। फंदा कसा गया और एक झटके के साथ तख्ता गिर पड़ा।

और इस प्रकार पेशवा का राजनिष्ठ सेवक सन् १८५७ के स्वातंत्र्य समर का महान् नायक, हिन्दुस्थान का निर्भीक वीर, धर्मरक्षक, देशाभिमानी और कुशल सेनापति तात्या टोपे का निर्जीव शरीर अंग्रेजों द्वारा निर्मित फांसी की टिकटिकी पर झूलता दृष्टिगोचर हुआ। वध मंच रक्त से सरोकार हो गया तो सम्पूर्ण देश के नेत्रों से अश्रुधाराएं प्रवाहित हो गयीं। समग्र हिन्दुस्थान ही अश्रुओं से भीग गया।

स्वदेश की सेवा के लिए उसने महान् और अवर्णनीय कष्टों को सहन किया था, यही तात्या का एकमात्र दोष थ। उसे इस देशभक्ति का पारितोषिक एक विश्वासघाती द्वारा उसके साथ किए गए विश्वासघात और नीचता के रूप में मिला था। अंग्रेजों ने उसे किसी रक्तपिपासु दस्यु के समान वध-स्तंभ पर लटकाया था। हे महावीर तात्या! तुमने इस अभागे देश में जन्म ही क्यों ग्रहण किया? इन विश्वासघाती नराधमों और महामूर्खों की स्वतंत्रता के लिये तुमने संघर्ष का आह्वान क्यों किया? तात्या टोपे, तुम्हारे लिये हमारे नेत्रों से जो अश्रुधाराएं प्रवाहित हो रही हैं, क्या तुम उन्हें देख रहे हो? हाँ तुम्हें रक्तदान का प्रतिदान हम अभागे और निर्बल अश्रु बहा कर ही तो दे रहे हैं। हे नरवीर! तुमने भी यह कैसा घाटे का सौदा किया।

तात्या की निष्प्राण देह को फांसी के फंदे से झूलते हुआ देखकर अपने पराक्रम पर समाधान व्यक्त करते हुए शूरवीर अंग्रेज अब वापस लौट रहे थे। तात्या की नश्वर काया इसी स्थिति में भगवान् सूर्यदेव के अस्ताचलगामी होने तक लटकती रही। वहां खड़े पहरेदार भी जब चले गए तब भीड़ को चीरते हुए यूरोपियन प्रेक्षक आगे बढ़े और उनमें इस महान् राष्ट्रभक्त के केशों के गुच्छे स्मृतिस्वरूप पास रखने की पहल करने की होड़ लग गई।

सन् १८५७ के स्वातंत्र्य युद्ध के इस होमकुंड में तात्या के बलिदान के रूप में यह अंतिम आहुति पड़ गई। ●●

पाकिस्तान में दफन होती हिन्दू-बौद्ध संस्कृति

-बलबीर पुंज

पाकिस्तान की शीर्ष अदालत द्वारा निर्देशित आयोग की हिदू मंदिरों की वस्तुस्थिति पर हाल में एक रिपोर्ट आई। इसमें जो दुर्भाग्यपूर्ण तथ्यों का प्रकटीकरण हुआ है, उससे मैं तो अचम्भित हूं और न ही भारतीय मीडिया के एक वर्ग द्वारा इसकी उपेक्षा पर आश्चर्यचकित। यह रिपोर्ट इसी कटु सत्य को रेखांकित करती है कि ''काफिर-कुफ्र'' के मजहबी दर्शन से प्रेरित व्यवस्था में गैर-इस्लामी संस्कृति और उसके प्रतीकों के लिये कोई स्थान नहीं है। पाकिस्तानी सुप्रीम कोर्ट द्वारा गठित एक सदस्यीय अल्पसंख्यक अधिकार आयोग ने गत ५ फरवरी को यह विस्तृत रिपोर्ट सौंपी है। इसमें सभी हिन्दू मन्दिरों (प्राचीन सहित) के खंडहर में परिवर्तित होने की बात कही गई है। इनमें चकवाल स्थित महाभारतकालीन कटासराज मंदिर भी शामिल है। विभाजन से पहले उसका महत्त्व जम्मू स्थित मां वैष्णो मंदिर के समकक्ष था। इन सभी मंदिरों के रखरखाव के लिये जिम्मेदार इवैक्यूई ट्रस्ट प्रॉपर्टी बोर्ड यानी ईटीपीबी को आयोग ने पूरी तरह विफल बताया है।

पाकिस्तान में १९६० से सक्रिय ईटीपीबी को वैधानिक दर्जा प्राप्त है। यह अल्प

संख्यकों के प्रति कितना गम्भीर है, यह उसकी आधिकारिक बेवसाइट पर सिख साम्राज्य के संस्थापक महाराजा रणजीत सिंह का नाम ''महाराज रमजीत सिंह'' लिखे होने से स्पष्ट हो जाता है। गत दिसंबर में खैबर पख्तूनख्वा में जिहादियों की भीड़ ने जिस प्राचीन हिन्दू मंदिर को ध्वस्त किया, उससे जुड़े एक अन्य मामले में जब शीर्ष अदालत में ईटीपीबी से जवाब मांगा, तब उसे भी रिपोर्ट देने में कई महीने लग गए। जांच आयोग का ईटीपीबी पर आरोप है कियह उन अल्पसंख्यक पूजास्थलों में ही रुचि रखता है, जहां से उसका आर्थिक हित जुड़ा हो। यह विडंबना ही है कि करतारपुर साहिब के प्रबंधन का काम इमरान सरकार ने इसी भ्रष्ट संस्था को सौंपा। ईटीपीबी के अनुसार पाकिस्तान के ३६५ मंदिरों में से १३ का प्रबंधन ही उसके पास है। ६५ मंदिरों की जिम्मेदारी हिन्दू समुदाय स्वयं उठाता है, वहीं २८७ मंदिरों पर भू-माफिया का कब्जा है। ईटीपीबी ने मंदिरों की जर्जर अवस्था के लिये हिन्दुओं-सिखों की बहुत कम आबादी को कारण बताया है। क्या पाकिस्तान में अल्पसंख्यक आबादी के नगण्य होने का एकमात्र कारण यह है किउसने १९४७ में वहां से भारत पलायन कर लिया था? नहीं।

फिलहाल पाकिस्तान की कुल आबादी करीब २१ करोड़ है। यदि विभाजन के समय मजहबी जनसांख्यिकी प्रतिशत को आधार बनायें तो आज वहां हिंदू-सिखों की संख्या तीन से साढे तीन करोड़ के आसपास होनी चाहिए थी, जो केवल ५०-६० लाख है। वे भी दोयम दर्जे का जीवन जीने को विवश है। आखिर ढाई-तीन करोड़ हिन्दू-सिख कहां गए? सच तो यह है कि पाकिस्तान में हिन्दुओं-सिखों ने या तो मजहबी उत्पीड़न से त्रस्त होकर इस्लाम अपना लिया या पलायन कर लिया जिसने विरोध किया, उसे मार दिया गया। हिन्दू सहित जो अल्पसंख्यक वहां बचे भी हैं, वे प्रताड़ना के शिकार हैं। सिंध प्रान्त में आए दिन जिहादियों द्वारा गैर-मुस्लिम युवतियों का जबरन मतांतरण इसका प्रमाण है। ऐसे में कोई आश्चर्य नहीं कि विभाजन के समय पाकिस्तान में हिन्दुओं और सिखों की जो आबादी करीब १५-१६ प्रतिशत थी, वह आज बमुश्किल एक प्रतिशत रह गई है। इस पृष्ठभूमि में भारत में मुस्लिमों की स्थिति क्या है? आजादी के समय खंडित भारत की आबादी ३३ करोड़ में मुस्लिम तीन करोड़ से अधिक थे, जो आज कम से कम २०-२१ करोड़ हो गए हैं। इन सभी को कुछ मामलों में बहुसंख्यकों से भी अधिक अधिकार प्राप्त हैं। फिर भी दस साल तक उपराष्ट्रपति रहे हामिद अंसारी जैसे लोग देश में असुरक्षित महसूस अनुभव करते हैं।

पाक में सात दशकों से अल्पसंख्यकों

का मजहबी शोषण और उनके प्रतीक चिन्हों का दमन जारी है। अपनी मूल हिंदू-बौद्ध सांस्कृतिक पहचान के बजाय स्वयं को पश्चिम एशियाई देश के रूप में परिभाषित करना और हिन्दू बहुल खंडित भारत के प्रति शत्रुभाव रखना पाकिस्तान के एक राष्ट्र के रूप में जीवित रहने का कारण है। यह सही है कि पाकिस्तान के संस्थापक मोहम्मद अली जिन्ना ने पाकिस्तानी संविधान सभा में एक पंथनिरपेक्ष पाकिस्तान बनाने की वकालत की थी। यह विचार उस 'द्विराष्ट्र सिद्धांत' के उलट था, जो स्वतंत्र अखंड भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में हिन्दुओं के साथ बराबर बैठने में घृणा से सिंचित था, जिसमें ६०० वर्षों तक पराजित हिंदुओं पर राज करने, तलवार के बल पर मतांतरण करने और उनके मंदिरों को तोड़ने की दुर्भावना थी। इसलिये जिन्ना के निधन के पश्चात् पाकिस्तानी नीति-निर्माताओं ने ''शरीयत'' को अंगीकार कर लिया। जिन भारतीय क्षेत्रों को मिलाकर १९४७ में पाकिस्तान बनाया गया था, वहां हजारों वर्ष पहले वेदों की ऋचाएं गढ़ी गई। बहुलतावादी सनातन संस्कृति का विकास हुआ। यही कारण है कि वैदिकसभ्यता की जन्मभूमि होने के कारण उस भूक्षेत्र में हिदू, बौद्ध, जैन और सिखों के कई सौ मंदिर-गुरुद्वारे थे। इनमें से कई आध्यात्मिक और ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण थे।

सैयद मोहम्मद लतीफ और खान बहादुर की पुस्तक लाहौर : इट्स हिस्ट्री, आर्कटेक्चरल रीमेंस एंडएंटिक्स, को मैंने बतौर राज्यसभा सदस्य २००३ में अपने आधिकारिक पाक दौरे पर लाहौर से खरीदी थी। इसमें लाहौर के कई ऐतिहासिक शिवालयों, मदिरों और गुरुद्वारों का विस्तार से वर्णन है। भाई बस्तीराम हवेली के निकट बांके बिहारी का मंदिर लाहौर का सबसे धनी मंदिर था। जब मैं पुस्तक में वर्णित पूजास्थलों की स्थिति देखने निकला तो उसकी विभीषिका देखकर स्तब्ध रह गया। पता चला कि १९४७ के बाद वे मंदिर/शिवालय या तो मस्जिद/दरगाह में परिवर्तित कर दिए गए या किसी की निजी संपत्ति बन गए या फिर लावारिस खंडहर बन चुके हैं। मंदिरों के भग्नावशेषों के सरकारी संरक्षण के बजाय स्थानीय लोगों को हिन्दुओं की आस्था को कलंकित और अपमानित करने के लिये बढ़ावा दिया जा रहा है। जब मैं लाहौर के प्रसिद्ध रेस्त्रां कूकू डेन पहुंचा, तब वहां जगह-जगह हिदू देवी-देवताओं की खंडित मूर्तियों और मंदिर अवशेषों ने मुझे झकझोर दिया। पाकिस्तान में गैर- इस्लामी प्रतीकों और शेष हिंदू- सिखों की दुर्गति इसलिए है, क्योंकि वहां का 'इको सिस्टम' बहुलतावाद और पंथनिरपेक्षता जैसे जीवन मूल्यों का अस्वीकार करता है।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

दैनिक जागरण १६ फरवरी २०२१ से साभार

मां की पुकार

-महन्त चन्द्रनाथ योगी

मार्च २०२१ से आगे

लेकिन सबसे अधिक करुणाजनक दृश्य तो वह था जब इन वीर बालकों की गिरफतारी का समाचार सुनकर सैकड़ों आदमी जेल के दरवाजे पर इकट्ठे हो गये थे। तब इन्हें अपने सन्तप्त हृदय से लगाते हुए इनकी वीर माताओं ने यह कहते हुए इनको जेल के अन्दर धकेल दिया कि हे भारत माता हम अपने हदय के हार इन एकलौते बच्चों को तेरी भेंट चढ़ाती हैं, क्या हमारी यह तुच्छ भेंट स्वीकार होगी ? इन अबलाओं का गजब का ढेठ था। बीसियों आदमी इस कारुंणिक दृश्य को देखकर हाथ से कलेजा दबाते हुए जमीन पर बैठ गये और अपने इन होनहार बच्चों की हालत पर आंसू बहाने लगे। पर वाह री स्वतंत्रता तेरे लिये सब कुछ सह लिया जाता है।

मैंने जापान का इतिहास पढ़ा और उसमें यह बात देखी जिस पर जापान वाले गर्व करते हैं। और वह यह थी-रूस, जापान युद्ध के समय एक नौजवान देश सेवा के लिये फौज में भर्ती होने को गया, पर अफसर ने यह कहकर भर्ती करने से इन्कार कर दिया कि अगर तू मारा गया तो तेरा अकेला बूढा बाप निराश्रय हो जायेगा। लड़कें के घर आने पर जब उसके बाप को यह किस्सा मालूम हुआ तो इसलिये फांसी खाकर मर गया जिससे उसके कारण उसका लड़का देश सेवा से वंचित न रह सके। फिर वह दोबारा दफ्तर में गया इस बार भर्ती कर लिया गया। उसने लड़ाई में खूब हाथ उठाकर वीरगति प्राप्त की। इन बाप बेटों का वर्णन स्वर्णाक्षरों में लिखा गया है जो जापानियों की देशभक्ति को सारे संसार में फैला रहा है। इस प्रकार जापान के बूढ़े और नौजवानों ने चाहे कुछ भी किया हो, पर हमारे दूधमुंहे बच्चों तक ने जो कुछ करके दिखला दिया वह उससे किसी प्रकार भी कम नहीं है। लेकिन वे आजाद हैं और हम हैं गुलाम। हमारी महंगी से महंगी और भीषण से भीषण कुर्बानी को कौन पूछता है ?

मैं निराश सा होकर अगाध चिन्ता में डूबने लगा, अचानक मेरे कानों में भिनक पड़ी-घबराओ मत ये ही वे बच्चे हैं जो भारतीय वीरता के सामने जापानियों की वीरता को फीकी बना देंगे।

७-**यशपाल सिंह**। उम्र १४ साल। यह लड़का देहात का रहने वाला और उसमें प्रचार करने वाला है। पर जब सरकार ने नौजवान भारत सभा को गैर कानूनी जमात ठहरा कर उसके सब कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार कर लिया और कितने ही जवान उसकी हस्ती को कायम रखने के लिये धड़ाधड़ उसके मैम्बर बनने लगे, तब यह भी शहर में आ धमका था और खूब तेजी से भाषण झाड़ने लगा था। नतीजा जो कुछ होता आया वही हुआ-जेल की हवा।

मजिस्ट्रेट ने मुस्कराते हुए कुछ प्यार के स्वर में कहा-क्यों यशपाल, तुम्हारे ऊपर विद्रोही भाषण देने का अपराध लगाया गया

है, क्या यह सच है ?

बिल्कुल सच लेकिन इसमें मेरा कुछ भी कसूर नहीं है।

मजिस्ट्रेट-क्यों यह कैसे ?

यशपाल-यह ऐसे है जबकि मेरे पिता चचा, बड़ा भाई सभी जेल में आ चुके हैं जो सबके सब विद्रोही हैं तो भला मैं और क्या बन सकता था।

मजिस्ट्रेट-तो तुम कबूल करते हो कि तुमने इस प्रकार के भाषण दिये जो बादशाह के खिलाफ उसकी प्रजा में विद्रोही भाव फैलाते थे।

यशपाल-मैंने केवल विद्रोही भाषण ही नहीं दिये बल्कि इस नौकरशाही की जड़ उखाड़ कर समुद्र में फैंक दी है।

जवाब बहुत ही करारा और चुभने वाला था। हाकिम महाशय भारतीय होने के कारण अपने देशीय सुपूत की ऐसी निर्भीकता देखकर अन्दर से चाहे खुश हुए हों पर कर्त्तव्य पालन के लिये जरा गम्भीर हो गया। मानों उनका दिल इस बात का अनुभव कर रहा था कि इसने मेरा कुछ भी भय नहीं किया और इसीलिये हाथ में कलम उठाते हुए जरा तेजी से कह उठे-अच्छा छः महीने तक यहीं की रोटी खाओ। इस प्रकार सजा सुनाकर अदालत के उठ जाने पर वीर माता ने अपने हृदय से चिपका कर उसका शिर सहलाया और किसी गहरी विचारधारा में बह चली।

ठीक इसी समय विनोद के बहाने से जेलर ने उससे कहा इसे यहां छोड़कर अकेली कैसे जा सकोगी ? अगर तुम चाहो तो इसे साथ ले जा सकती हो।

वीर राजपूतनी ने उत्तर दिया-हां ठीक है, लेकिन यह राजपूत का लड़का है इसलिये इससे ऐसी आशा नहीं हो सकती। आप खुद भी पूछ लें अगर यह चले तो खैर।

मजिस्ट्रेट-क्यों यशपाल, बाहर जाना चाहते हो ?

यशपाल-क्यों किसलिये ?

मजिस्ट्रेट-इसलिये कि तुम्हारी माँ निराश हुई अकेली घर जायेगी। **यशपाल**- तब तो यह अच्छा होगा कि आप इन्हें भी यहां रख ले, क्योंकि यहां हम चार है और वहां यह अकेली रहेगी। ऐसी हालत में आप ही बतलावें मेरा वहां जाना ठीक है कि इनका यहां रहना। सब हंस पड़े और चल दिये। किसी के मुख से निकल पड़ी शाबाश बहादुर, तुम्हीं उस कलंक को धोओगे जो भारत को गारत किये देता है।

इनके अलावा आशाराम, नारायण सिंह, किशोरीलाल, भवज्ञनीगिर, सुरेश ब्रह्मचारी, रत्न सिंह, सुगनचन्द, हरीसिंह छज्जूसिंह चतुर सिंह आदि सभी लड़के ऐसे थे जिन्होंने आखिर तक अपनी आन पर डटे रहकर यह जितला दिया कि ये ही वे भागीरथ हैं जिनकी कठिन तपस्या के फलस्वरूप भारत में एक बार फिर आजादीरूपी गंगा बहने लगेगी। इस प्रकार अपने जिले के होनहार बच्चों की इस उत्कट देशभक्ति को देखकर मुझे भविष्य के चमक उठने का पूरा विश्वास हो गया।

क्रमशः

मन्दिर से निजामुद्दीन मरकज तक

मार्च २०२१ से आग

लेखक-राजवीर आर्य एम०ए०
९८११७७८५५

यह १८वीं शताब्दी का प्रारम्भ था अगर इस समय कोई तेजस्वी व्यक्ति होता तो जो हिन्दू बलात् या अन्य कारणों से मुसलमान बनाये गये थे वे पुन: अपने धर्म और समाज में वापिस आ सकते थे और आना भी चाहते थे। कश्मीर ओर अन्य कई जगहों पर उन्होंने इसके लिये आग्रह भी किया। भारत का ब्राह्मण वर्ग रूढिवादी, अविद्या, तंगदिली व ओच्छी मानसिकता का शिकार होकर इसका विरोध करता रहा। परिणामस्वरूप एक बहुत ही अच्छा स्वर्णिम अवसर खो दिया। इसी समय ईस्ट-इंडिया कंपनी के माध्यम से अंग्रेजों ने अपने पैर पसारने शुरू कर दिए। यद्यपि १५८२ के आसपास जब अकबर यहां राज्य करता था उसी समय भारत में ईसाई पादरियों को भेजना शुरू कर दिया था। लेकिन विशेष प्रभाव ये छोड़ नहीं पाये। जब अंग्रेजों ने समस्त भारतवर्ष पर अपा प्रभुत्व जमा लिया उस समय अस्पृश्यता नामक राक्षस अपना भयंकर रूप धारण कर चुका था इस छुआछूत नामक महामारी का सर्वाधिक लाभ अग्रेजों द्वारा हिंदुओं को ईसाई बनाने में हुआ। जिन हिन्दुओं को पानी पीने तक भी अपने कुओं पर नहीं चढने दिया जाता था वहां मात्र बप्तस्मा का चिह्न व नाम बदलने मात्र से उसको वही सम्मान मिलने लगा जो एक स्वर्ण हिन्दू को मिलता है। मुसलमानों ने तो पहले ही रोटी-बेटी का द्वार खोला हुआ थ। इस तरह से इस हिंदू जाति पर अविद्या और हठधर्मिता के कारण संकटों की गाज गिरती ही रही। इसी अस्पृश्यता का अभिशाप और उसके दुष्परिणाम सम्पूर्ण भारतवर्ष भुगत रहा है। यह हिन्दू जाति अब तक समाप्त हो जाती अगर सन् १८२४ में महर्षि दयानन्द सरस्वती न आते। ५००० वर्ष पश्चात् महर्षि दयानन्दने ही वर्ण व्यवस्था को कर्म के आधार पर बताया। उन्होंने वेद, शास्त्र व मनुस्मृति के प्रमाणों के साथ विस्तार से वर्ण व्यवस्था का वैदिक स्वरूप बताया। जब उन्होंने देहरादून के मुन्शी मुहम्मद उमर को पुन: हिन्दू धर्म ग्रहण करके अलखधारी नाम रखा तो समस्त भारतवर्ष में खलबली मच गई। विरोध भी बहुत हुआ लेकिन सूर्य व दीपक वाली ही कहावत बनकर रह गई। सन् १८७५ में महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना की जिसके माध्यम से अस्पृश्यता पर प्रहार पर प्रहार होने लगे। आपको इसका एक प्रमाण देते हैं। सैंसस रिपेर्ट १९२१ से पता चलता है कि संयुक्त प्रान्त आगरा और अवध के ईसाई मिशन इस बात की शिकायत करने लगा है कि जो उनके द्वारा संचालित धर्म-परिवर्तन के कार्यों में आर्यसमाजियों द्वारा रुकावटें डाली जाती हैं।

ऋषि दयानन्द के पश्चात् इस शुद्धि कार्य को युद्ध स्तर पर यदि किसी ने किया तो सर्वप्रथम इसी कारण प्राण न्यौछावर करने वाले वीर संन्यासी स्वामी श्रद्धानद जी का नाम ही आता है। अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) के ३४वें अधिवेशन की स्वागत समिति के अध्यक्ष पद २७ दिसंबर १९१९ को भाषण देते हुये राष्ट्रीयता को संकट से निकालने के दो विषयों पर बल दिया था प्रथम शिक्षा और द्वितीय अस्पृश्यता निवारण। अगर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी इन दोनों बातों पर स्वामी जी का सहयोग करते तो आज कुछ और बात होती। स्वामी जी बार बार पत्रों के माध्यम से महात्मा जी से अनुरोध करते रहे लेकिन हाथी के दांत दिखावे के और खाने के और वाली कहावत महात्मा गांधी जी करते रहे। लेकिन वीर संन्यासी कहां चुप बैठने वाला था सन् १९०९ में पंजाब हिन्दू सभा की स्थापना हुई इसमें समानान्तर मुसलमानें ने मुस्लिम लीग की स्थापना कर डाली और अपना काम भी शुरू कर दिया। हिन्दू सभा कोई विशेष काम नहीं कर पाई। अधिवेशन व प्रस्ताव खूब पारित हुये, लेकिन इसका कार्य संतोषजनक न होने के कारण सन् १९२१ ई. में इस संगठन का नाम अखिल भारतीय हिन्दू महासभा रख दिया। इसके साथ ही अखिल भारतीय महासभा का अधिवेशन भी हुआ और उसमें प्रस्ताव पास हुआ कि साढे चार लाख मुस्लिम राजपूतों को घर वापसी कर लिया जायेगा। हिन्दू संगठनों द्वारा तो महज औपचारिकता की गई इसके विपरीत हकीम अजमल खां ने मुस्लिम धर्मोपदेशकों की एक संस्था स्थापित कर दी जिसका नाम 'जमीयत-ए-उल्माए हिंदू' रखा यद्यपि हकीम अजमल खां अत्यन्त उदार व्यक्ति थे और उन्होंने कहा कि हिन्दुओं को भी 'जमीयत-ए-पण्डितान' की स्थापना कर लेनी चाहिये। लेकिन जब तक खिलाफत आन्दोलन चलता रहा हिन्दू-मुस्लिम एकता टिकी रही। परन्तु मुस्तफा कमाल पाशा की तलवार ने इस एकता को समाप्त कर दिया। मालाबार, मुल्तान तथा अन्यत्र हिन्दुओं के विरुद्ध जिहाद बोल दिया। गदहे को चाहे जितना प्यार करो वह दुलती मारना नहीं छोड़ेगा डंडे का यार जो ठहरा वाली कहावत चरितार्थ हो गई।

दूसरी तरफ हिन्दू संगठन उस थोथे बांस की तरह कार्य कर रहा था जो आवाज तो ज्यादा करता है लेकिन चोट नहीं मारता। मलकाना राजपूत बार बार प्रार्थना कर रहे थे और उनके प्रार्थना पत्र क्षत्रिय सभा ने अपनी स्वीकृति भी प्रदान कर दी थी लेकिन राजपूतों की उदासीनता और उपेक्षा से यह कार्य शिथिल पड़ गया। उल्टा इसका असर यह हुआ कि मुस्लिम संगठन खड़े हो गए और उन्होंने लाहौर में एक बृहद् मीटिंग करके इन मलकाना राजपूतों के समस्त गांवों में एक एक मुस्लिम धर्म उपदेशक भेज दिये और उन्होंने प्रचार करना शुरू कर दिया। फरवरी १९२३ तक ८० से भी अधिक मौलवी वहां कार्य करने लगे थे। मौलवियों ने मिलकर एक सुसंगठित संस्था का निर्माण कर लिया। मुसलमानों द्वारा विष

वमन किया जाने लगा और सब प्रकार के प्रयत्न करके मलकाना राजपूतों को इस्लाम में आस्था बनाये रखने के लिये सुनियोजित झंग से प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। इससे हिन्दू संगठनों को बहुत भारी धक्का लगा और सबने मिलकर मजबूत संगठन तैयार करने पर विचार किया जिससे मलकाना, मूला जाट, गूजर, नौ-मुस्लिम, ब्राह्मण, बनिया आदि लाखों की संख्या में छोटी जाति के लोग पुन: हिन्दू बनने के लिये बड़े उत्सहित थे। संगठन बना लिया गया और उसका नाम ''भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा'' रखा गया। इसकी प्रबन्ध समिति बना ली गईऔर उसका प्रधान स्वामी श्रद्धानन्द जी को बनाया गया। इस विशाल और जिम्मेदाराना पद पर स्वामी श्रद्धानन्द जी जैसे व्यक्तित्व व कृतित्व वाले व्यक्ति के द्वारा उत्तरदायित्व सम्भालने से समस्त भारतवर्ष में खलबली मच गई। सभी यह भी जानते थे कि स्वामी श्रद्धानन्द जी पदलोलुप नहीं हैं और यह लौह पुरुष आर-पार की लड़ाई लड़ता है। उसी दिन प्रधान पद ग्रहण करते ही स्वामी जी ने जन धन की सहायता की एक विज्ञप्ति तैयार कर दी उसको प्रबन्ध समिति के सम्मुख रखने से पहले ही **जमीयत-हिदायत-उल-इस्लाम** ने खुलेआम एक लाख की अपील निकाल दी। इसका एकमात्र उद्देश्य यही था कि मलकानों को पक्का मुसलमान बना लिया जाये। इस मुस्लिम संगठन और इसके अन्य संगठनों ने स्वामी जी से भयभीत होकर पुरजोर ढंग से कार्य करना शुरू कर दिा। स्वामी जी भी उससे अगले दिन ही प्रबन्ध समिति की बैठक में भाग लेने के लिये आगरा चले गये। वहां पर कुछ मलकाना परिवारों का स्वामी जी से परिचय करवाया जिससे वे आश्चर्यचकित हो गये उनका हृदय पीड़ा से कराह उठा कि जिन मलकानों को आप शुद्ध करना चाहते हैं वे तो पहले ही हमसे भी ज्यादा शुद्ध हैं। उनके सिर पर चोटी है, विवाह के रीति रिवाजों व शाकाहारी होने के विषय में जब ज्ञात हुआ तो स्वामी जी को लगा कि प्रायश्चित्त इनको नहीं बल्कि प्रायश्चित्त हमें करना चाहिये। जिन लोगों ने सदियों तक अपने भाइयों की उपेक्षा करने का अपराध किया है। उस समय स्वामी श्रद्धानन्द जी ने ये शब्द कहे ''आजकल वह प्राचीन महान् आर्यजति मृतक समझी जाती है यह भावना इस कारण नहीं है कि इसकी संख्या घट रही है, अपितु सम्पूर्ण रूप से असंगठित है। व्यक्तिश: इस जाति का प्रत्येक व्यक्ति बौद्धिक और शारीरिक दृष्टि से अद्वितीय है, मानव जाति की कोई भी अन्य शक्ति इस जाति का नैतिकता में मुकाबला न कर सकती, तो भी यह जाति अपने विभिन्न उपवर्गों के कारण और अपनी एकांगी प्रवृत्ति के कारण नितान्त दुबर्ल सिद्ध हो रही हैं।'' यहां पर उल्लेखनीय विषय यह है कि महात्मा गांधी का इस विषय में निरन्तर उदासीन बना रहना हमारे लिये बड़े दुर्भाग्य का कार्य रहा है। स्वामी श्रद्धानन्द कहा करते थे कि हमारी जाति के चुने हुये लाखों व्यक्तियों को बाधित होकर इस्लाम स्वीकार कर लेना पड़ रहा है।

क्रमश:

सात्त्विक त्याग

-स्वामी श्रद्धानन्द जी

सारे संसार में त्याग की धूम मच रही है किन्तु त्याग के यथार्थ अभिप्राय को कोई विरला ही समझता है। किस मनुष्य को किसी न किसी समय दु:ख पीड़ित नहीं करता। ऐसे समय में ही त्याग का ध्यान प्राय: मनुष्यों को आता है। झूठे मोह में फंसकर पुत्र की देह को ही आत्मा समझता हुआ पिता कैसा प्रसन्न होता है। उसकी आंखों से उस समय यह संसार एक सदैव की खुशी से कम मूल्य नहीं रखता। संसार से उसे बड़ा भारी प्रेम हो जाता है परन्तु शरीर अनित्य है। वह सदैव कायम नहीं रह सकता। एकदम बीमारी का जोर होता है और प्रिय पुत्र शरीर त्याग कर चल देता है। अब वही संसार उजाड़, बियाबान, सुनसान जंगल की भांति भयानक दिखाई देता है। तब वैराग्य उत्पन्न होता है। न स्नान का ध्यान, न संध्या की खबर, न शरीर की सुध और न आत्मा का ख्याल। मन चाहता है कि कपड़े फाड़कर निकल चलें, किसी कर्तव्य का ध्यान नहीं। यदि कोई दीन सहायता की इच्छा से आता है तो उसकी जान निकाल लेने की इच्छा होती है। जब मेरा पुत्र नहीं तो दया का मतलब क्या? दान की इच्छा क्या? ऐसे समय म मनुष्य प्राण तक तज देने को तैयार हो जाता है। ऐसे त्याग को कृष्ण भगवान् तामसी त्याग कहते हैं।

अविद्या में फंसा हुआ, बुद्धिविहीन मनुष्य, जब अपने कर्तव्य को भूल जाता है, उस समय वह फंसावट को त्याग समझता है। मोह के वशीभूत हुआ अपने आपको त्यागी समझे, क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है। फिर त्याग क्या है? एक दूसरे दृश्य की तरफ दृष्टि जाती है। प्रात:काल पुरुष शौच स्नानादि से निवृत्त होकर सन्ध्या वन्दन से निवृत्त हो चुके हैं। अग्निहोत्र भी कर चुके हैं। एक आर्य पुरुष अपने उपासना गृह से उठकर, बाहर सैर के लिये चला है। मार्ग में मित्र का मकान है। ख्याल आता है, सैर के लिये इसे भी साथ ले चलो। मकान के अन्दर जाता है, वह मित्र को देखकर हैरान हो जाता है अभी तक चारपाई पर ही लेटा हुआ है। उसको हिलाकर सचेत करता है। क्यों, अब तक सोते ही हो? नहीं जागा तो चार बजे ही था। परन्तु शरीर का कुछ कष्ट है, स्नान नहीं कर सकता। संध्या तो कर चुके होंगे? संध्या कैसे करता, रोगी हूं। क्या संध्या का त्याग बीमारी के लिए। संध्या अपने सच्चे पिता से मेल करने का काम है। क्या शरीर के दु:ख के कारण पिता के दर्शन त्याग दोगे? शरीर को जल से नहीं धो सकते, न सही, हाथ मुंह तो गर्म पानी से धो सकते हो। अगर बैठ नहीं सकते, इस भांति दुर्बल हो गये हो तो क्या लेट कर पिता का ध्यान नहीं कर सकते? क्या निर्बल बच्चा लेटा हुआ माता से प्यार नहीं कर सकता। आह, शारीरिक परिश्रम के भय से अपना कर्तव्य जानते हुए भी पालन न करना राजस त्याग कहलाता है।

एक और दृश्य देखिये-एक दीन रात को पुकार रहा है। अगर तुम्हें परमेश्वर ने शरीर दिया है, अगर उसने तुम्हें बुद्धि दी है और मन दिया है क्या तुम्हारा कर्तव्य नहीं कि दीन की उसी समय सहायता के लिये जाओ, परन्तु शारीरिक आलस उठने नहीं देता। क्या यह सच्चा त्याग है? रात दिन हमारे कर्तव्य हमें बुला रहे हैं और हम गहरी नींद में मस्त हैं।

यह त्याग नहीं यह तो पहले दर्जे की फंसावट है। फिर त्याग क्या है? यदि सब कुछ छोड़ देना त्याग नहीं, यदि शरीर के सारे धर्मों को भूल जाना त्याग नहीं, तो फिर त्याग किसे कहते हैं? अपने दैनिक कर्मों से पूछो, सीधा उत्तर मिलेगा। तुम दीनों की रक्षा क्यों करते हो? इसलिये कि तुम्हारा यश संसार में फैले, इसलिये नहीं कि उनकी रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य है। तुम संध्या इसलिये करते हो कि लोग तुम्हें महात्मा समझें, इसलिये नहीं कि पिता का सत्संग तुम्हारा कर्तव्य है। तुमने कर्मों के त्याग को त्याग समझ रखा है। परन्तु कर्मों का त्याग उलटा कर्मों की जड़ काटता है। जब तुम्हारी कोई सम्पत्ति ही नहीं तो उसका त्याग कैसा? फिर सात्त्विक त्याग क्या है? तुम वैदिक कर्मों के करने में तो दिन रात तत्पर नहीं परन्तु उसके अन्दर फंसे नहीं। तुम उसकी रक्षा करो किन्तु अनाथों को अपना खिलौना मत बनाओ। तुम गुरुकुल कायम करो उनकी सेवा करो परन्तु गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को अपने व्यसन पूरा करने की नुमायश न बनाओ। तुम प्रकृति के सौन्दर्य को आंखों से देखो लेकिन उन आंखों को उस प्राकृतिक सौन्दर्य का दास मत बनाओ। कर्म करो परन्तु उसमें फंसो नहीं। न केवल यह किन्तु उस किये हुये कर्म के फल की अभिलाषा मत करो। बस, यही त्याग है। तुमने कर्म किये, तुम्हारी सम्पत्ति बन गई। उन कर्मों के तुम अधिकारी बन बये किन्तु तुमने फल का ध्यान भी न किया, यही सच्चा सात्त्विक त्याग है।

प्यारे भाइयो! यह है आदर्श, त्याग का। इस आदर्श से किस प्रकार हम सब गिरे हुए हैं? वैदिक धर्म के प्यारो! क्या त्याग को इस गिरी हुई दशा से उठाने का हम सबसे बढकर किसी ने बीड़ा उठाया था? हमने वैदिक धर्म को ग्रहण करके भी पश्चिमीय विचारों का खोल चढा लिया है। हमने इस आदर्श को यह कहकर टाला कि अगर कोई मनुष्य केवल यश के विचार से कोई अच्छा काम करता है तब भी उसे साहस देना चाहिए। परन्तु हम सब एक सच्चाई को भूल जाते हैं। जब तक सकाम भाव विद्यमान है तब तक गिरने का भय लगातार रहता है। इस भय से बचने के लिये निष्काम भाव से सच्चे त्याग के आदर्श की ओर चलना चाहिए। जिस मनुष्य ने यश के विचार को छोड़कर, कर्म से सर्वथा मुंह मोड़ लिया है, वह पापी तो है, वह केवल अपने आत्मा को दुःख सागर में डुबोता है। जो यश को चाहने वाला आज नेक कामों में लगकर हम सब की रुचियों को अपनी ओर खींच रहा है, संभव है वह हमारी भूल से, प्राप्त हुए बल के कारण दूसरे सैकड़ों, हजारों आत्माओं को भी पाप के गड्ढे में धकेलने का हेतु हो। तब हमारा कर्तव्य क्या है? सात्त्विक त्याग का भाव अपने अन्दर लाना और अपने उदाहरण से दूसरों को भी इसी मार्ग से चलने के लिये प्रेरित करना। यह माना कि सकामभाव से काम करना पहले पहल, बड़ा सुहावना मालूम होता है, परन्तु जब वैयक्तिक न्यूनता के कारण उस मार्ग में ठोकरें लगती हैं तो मनुष्य न इधर का रहता है न उधर का। इसलिये आज से ही यह अभ्यास आरम्भ करो कि न अविद्या के वश होकर, हम कभी भी अपने कर्तव्य कर्मों का त्याग करें। हम कर्मों को सदैव धर्मानुसार पालन करते हुए, उनमें फंसने से बचें और उससे फल भोग की इच्छा को मन से त्याग दें।

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द की बोधरात्रि

रचनाकार-प्रियवीर हेमाइना
३१८, विपिन गार्डन, नई दिल्ली-११००५९

हे मूलशंकर कल्याण कर!
कल्याण कर वह बोध पाया

शिवरात्रि पर जागकर तुमने, कल्याणकर वह बोध पाया।
वेदधर्म की निकली गंगा, जगभर ने शुभ ही शुभ पाया।।

क्या है सच्चाई क्या है झूठ, इसका जग को बोध कराया।
वेदसूर्य पा गया देश यह, भय का भूत तुमने भगाया।।
तुम बोले तेजस्वी स्वर से, आर्यों का आर्यत्व जगाया।
आर्यों के गौरव का तुमने, जीवनभर ही ज्ञान कराया।।

तुम बोले जग ने स्वर पाया, भारत माँ का भाल उठाया।
शिवरात्रि पर जागकर तुमने कल्याणकर वह बोध पाया।।

'सत्यार्थप्रकाश' मिला महान्, हुई देश में क्रान्ति नयी ही।
मतान्तरों की खुल गई पोल, मिली विश्व को शान्ति नयी ही।।
क्रान्ति ज्योति से ज्योति जलाई, जग को जीवनदान कर गये।
दयानन्द योगी संन्यासी, सुनाम अपना यहाँ कर गये।

हो वाहिका राट्रीयता की, 'आर्य भाषा' घोष गुंजाया।
शिवरात्रि पर जागकर तुमने, कल्याणकर वह बोध पाया।।

'आर्याभिविनय' मिली हमें, उसी शिवरात्रि-बोधरात्रि से।
'गोकरुणानिधि' भी मिली हमें, उसी शिवरात्रि-बोधरात्रि से।।
भारत का गौरव कहता है, तुम मेरे अभिमान बन गये।
अस्मिता देश की कहती है, तुम मेरे सम्मान बन गये।।

जो न मृत्यु से कभी मरेगा, ऐसा तुमने प्रबोध पाया।
शिवरात्रि पद्ध जागकर तुमने, कल्याणकर वह बोध पाया।।
प्राणों के स्वर उस ही ऋषि के, गूँज रहे सर्वत्र आज भी।।

पाखण्ड हटें रचें नया कुछ, स्वर उसके कह रहे आज भी।।
यह परिवर्तनशील विश्व है, कल की दुनियां आज कहां है?
उस ऋषि का ही बीज फला है, जनता का साम्राज्य यहां है।

बोध यहीं है उस योगी का, सबके हित में उसे लगाया।
शिवरात्रि पर जागकर तुमने, कल्याणकर वह बोध पाया।।

उसी रात्रि ने है दिया हमें, वेदों का भाष्यकार यथार्थ।
दयानन्द वह भारत सुपूत, किया उसी ने सही वेदार्थ।।
ईर्ष्या हुई देवताओं को, भारत माँ का दीप ले गये।
वेद का अमृत बांटा तुमने, विष पी जग को प्राण दे गये।।

यह भारत माता हुई धन्य, दयानन्द-सा सुपूत पाया।
शिवरात्रि पर जागकर तुमने, कल्याणकर वह बोध पाया।।

महाभारत की सुक्तिसुधा

-स्वामी सोम गिरी, हरद्वार

- एकगेहे जातवेदा: प्रदीप्त: कृत्स्नं ग्रामं दहते। शान्तिपर्व ७३.२१।।
- एक घर में अग्नि लग जाये तो न बुझने पर सारे ग्राम को जला देती है।
- अज्ञानात् क्लेशमाप्नोति तथापत्सु निमज्जति।
- व्यक्ति के अज्ञान से क्लेश उगता है तथा विपत्तियों में डूब जाता है।
- अज्ञानं चातिलोभश्चाप्येकं जानीहि। शान्ति २१२.१७।।
- अज्ञान और अतिलोभ ये दोनों एक ही हैं।
- चक्रवत् रिवर्तन्ते ह्यज्ञानाज्जन्तवो भृशम्। शान्ति. २१२.१७।।
- अज्ञान के कारण प्राणी निरन्तर जन्म-मरण के चक्र में घूमते रहते हैं।
- एक:शत्रुर्न द्वितीयोऽस्ति शत्रुरज्ञानतुल्य: पुरुषस्य। शन्ति २९७.२८।।
- पुरुष का एक ही शत्रु है वह है अज्ञान, उसे समान कोई दूसरा कोई शत्रु नहीं है।
- नावमन्येदभिगतं न प्रणुद्वद्यात् कदाचन। अनुशासनपर्व ६३.१३।।
- घर आये अतिथि का न अपमान करें, न उसे भगायें।
- स्वदेशे परदेशे वाप्यातिथिं नोपवासयेत्। अनु. १६२.४३।।
- अपने घर में या प्रदेश में अतिथि को कहीं भूखा न रहने दें।
- एक: स्वादु न भुञ्जीत। उद्योगपर्व ३३.४६।।
- अकेला मनुष्य स्वादिष्ट भोजन न करे।
- माभक्ष्ये मानसं कृथा:। शान्ति० १४१.७०।। *शेष पृष्ठ २४ पर*

महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर का १०५वां वार्षिक महोत्सव सम्पन्न

१३-१४ मार्च २०२१ को गुरुकुल झज्जर का १०५वां वार्षिक महोत्सव अत्यन्त उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर ब्रह्मचारियों द्वारा ऋग्वेद पारायण यज्ञ किया गया, इस यज्ञ के ब्रह्मा डा. जगदेव जी विद्यालंकार (रोहतक) थे। यज्ञ में अनेक यजमान दम्पती उपस्थित थे। शतशः सज्जनों ने यज्ञ की पूर्णाहुति में भाग लिया। ब्रह्मा जी ने तथा डॉ० स्वामी देवव्रत जी ने यज्ञ का महत्व बताते हुए वेदमन्त्रों की सरस और सरल व्याख्या करके श्रोताओं के ज्ञान में वृद्धि की।

इस महोत्सव में अनेक साधु, महात्मा, विद्वान् तथा भजनोपदेशकों ने पधार कर उत्सव की शोभा बढाई। जैसे डॉ. स्वमी देवव्रत जी अध्यक्ष सार्वदेशिक आर्यवीर दल, स्वामी कर्मपाल जी गुलकनी जींद (सर्वखाप पंचायत के अध्यक्ष), स्वामी प्रणवानन्द जी गुरुकुल गौतमनगर, दिल्ली, स्वामी ब्रह्मानन्द जी महेन्द्रगढ, आचार्य प्रद्युम्न जी गुरुकुल खानपुर (नारनौल), स्वामी सम्पूर्णानन्द जी गुरुकुल नली खुर्द (करनाल), स्वामी विश्वानन्द जी गुरुकुल दखौला, ब्रह्मचारी अग्निदेव जी गुरकुल कालवा, डॉ. योगानन्द शास्त्री (पूर्व मन्त्री दिल्ली सरकार), डॉ० महावीर जी मीमांसक दिल्ली, डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी (पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी), राष्ट्रकवि डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी गुड़गांव, श्री सत्यवीर जी शास्त्री (पूर्व मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा), डॉ. जय भारती पंचकूला (पूर्व निदेशक स्वास्थ्य विभाग पंजाब) डॉ. राजकुमार जी झज्जर (पूर्व शिक्षा उपनिदेशक दिल्ली), पं० रामनिवास आर्य भजनोपदेशक, श्री कुलदीप आर्य भजनोपदेशक बिजनौर, कुमारी तन्नु आदि।

उपर्युक्त सज्जनों ने अपने ज्ञानवर्धक उपदेशों और मधुर भजनों के द्वारा श्रोताओं के ज्ञान में अभूतपूर्व वृद्धि करने के साथ-साथ हृदयों को भी उल्लास से पूरित करदिया। इस कार्यक्रम के समय ही नेपाल में जन्मे गुरुकुल झज्जर के स्नातक तथा वर्तमान में अटलाण्टा अमेरिका में वैदिक धर्म के शिक्षक डॉ. वीरदेव विष्ट ने अपने गुरु स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश की जन्म शताब्दी के अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन कर कर उसका विमोचन स्वामी प्रणवानन्द जी के करकमलों द्वारा कराया। इसी कार्यकम के अन्दर डॉ. वीरदेव विष्ट ने अपने विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका की ओर से पांच विद्वानों को पुरस्कृत किया। स्वामी प्रणवानन्द जी को एक लाख रुपये, प्रशस्ति पत्र तथा शाल भेंट किया। डॉ. स्वामी देवव्रत जी, आचार्य विजयपाल जी योगार्थी, विरजानन्द दैवकरणि तथा डॉ. धर्मवीर जी अजमेर मरणोपरान्त को पचास-पचास हजार रुपये, सम्मान पत्र तथा शाल भेंट किया गया। डॉ. वीरदेवजी की ओर से इस कार्य को डॉ. जगदेव विद्यालंकार (रोहतक) ने सम्पन्न कराया। डॉ. विक्रम सिंह शास्त्री रोहतक तथा डॉ. राजवीर शास्त्री फरीदाबाद ने इस कार्य में हाथ बटाया। गुरुकुल के स्नातक और अन्तर्राष्ट्रीय

पहलवान परमजीत का भी स्वागत किया गया।

उत्सव के द्वितीय दिवस पर भजनोपदेशकों के कार्यक्रम के पश्चात् अनेक विद्वानों क प्रवचन हुए। गुरुकुल झज्जर प्रतिवर्ष अपने वार्षिक उत्सव पर स्वामी ओमानन्द सरस्वती की स्मृति में तीन पुरस्कार प्रदान करता आ रहा है। इस वर्ष नैष्ठिक ब्रह्मचारी पुरस्कार स्वामी कर्मपाल जी गुलकनी जींद को, विद्वत्पुरस्कार विरजानन्द दैवकरणि को, भजनोपदेशक पुरस्कार कुलदीप आर्य बिजनोर को प्रदान किया गया। इन तीनों को २१-२१हजार रुपये, अभिनन्दन पत्र तथा शाल प्रदान किया। यह कार्य चौ० पूर्णसिंह देशवाल तथा आचार्य विजयपाल जी योगार्थी के द्वारा सम्पन्न हुआ। मंच संचालन श्री राजवीर जी छिक्कारा ने योग्यतापूर्वक किया।

१३ मार्च को स्वामी देवव्रत जी की प्रधानता तथा स्वामी शुद्धबोध जी के निर्देशन में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने विविध प्रकार के आसन, लाठी, भाला, तलवार, जिम्नास्टिक, मल्लखंभ, गले से सरिया मोड़ना तथा जीप रोकना आदि आकर्षक प्रदर्शन करके द्रष्टाओं को उत्साह से पूरित कर दिया।

गुरुकुल की आर्थिक सहायता के लिये प्रतिवर्ष राजनेताओं को भी निमन्त्रित किया जाता था उसी क्रम में इस बार भी उन्हें निमन्त्रित किया गया और उनकी स्वीकृति भी प्राप्त हो चुकी थी। जैसे चौ० रणजीतसिंह चौटाला, चौ० जयप्रकाश दलाल, चौ० दुष्यन्त चौटाला, चौ० ओमप्रकाश धनखड़, श्री ओमप्रकाश यादव, डॉ. अरविन्द शर्मा सांसद (रोहतक), स्वामी सुमेधानन्द जी सांसद सीकर को उत्सव में पधारना था। परन्तु किसान आंदोलन की आड़ में गुरुकुल के निकटवर्ती ग्राम के कुछ अनभिज्ञ और असामजिक तत्त्वों के दुराग्रह और राजनेताओं का विरोध करने की भावना से योजना बनाकर गुरुकुल के मार्ग पर सैकड़ों लोग धरना देकर बैठ गये और दोनों दिनों तक गुरुकुल के विरुद्ध असत्य प्रचार करते रहे। पुनरपि सामान्य जनता के आगमन से भीड़ बढती गई।

इन आन्देलनकारियों की अभद्रता से गुरुकुल को लगभग ८७ लाख रुपये की हानि उठानी पड़ी है। सार्वजनिक शिक्षण केन्द्र तथा धार्मिक संस्था गुरुकुल की इतनी बड़ी हानि करके विरोधी लोगों को अपने कुकृत्य पर लज्जित होना चाहिये। इन्हीं लोगों के बच्चे गुरुकुल में पढते हैं, उन्हें इन बालकों पर भी दया नहीं आई। इस धन से गोशाला को भी लाभ पहुंचता, परन्तु गोमाता का भला करना भी इनको नहीं भाया जबकि ये लोग अपनी बेकार गौओं को गुरुकुल की गोशाला में ही छोड़ते रहते हैं। समझदार व्यक्ति ऐसा निन्दनीय कार्य कभी नहीं कर सकता। ऐसे लोगों को प्रायश्चित्त करना चाहिये तथा अपने कार्य का पुनरीक्षण करना चाहिये और अपनी भूल को स्वीकार करके गुरुकुल की तथा गोमता की आर्थिक सहायता करनी चाहिये।

१५ मार्च के पंजाब केसरी अखबार ने अधूरी जानकारी के आधार पर गुरुकुल से सम्पर्क किये बिना ही किसानों के किसी प्रतिनिधि द्वारा भ्रामक टिप्पणी सुनकर समाचार प्रकाशित कर दिया। ऐसा करना पत्राकारिता की दृष्टि से अशोभनीय है। पत्रकार को दोनों पक्षों से बात करके ही सही सूचना छापनी चाहिये। यह पत्रकार उत्सव की समाप्ति पर खाली कुर्सियों का फोटो छापकर क्या सिद्ध

करना चाह रहा है।

गुरुकुल में पधारने वाले आगन्तुकों के निवास और भोजन आदि का सुप्रबन्ध करने में गुरुकुल के अध्यापकों ने यथाशक्ति सहयोग किया। जैसे सर्वश्री डॉ. अजित जी भानुवंशी, महावीर जी शास्त्री, मा० कुलदीप आर्य, नरेश कुमार शास्त्री, अरविंद कुमार शास्त्री, शतक्रतु शास्त्री, ऋतेश शास्त्री आदि।

उत्सव की समाप्ति पर गुरुकुल के आचार्य श्री विजयपाल जी योगार्थी ने अपने उद्‌बोधन के पश्चात् सभी संन्यासियों, विद्वानों, भजनोपदेशकों, आगन्तुक सज्जनों तथा देवियों का आभार व्यक्त करते हुए उन्हें धन्यवाद दिया तथा दानी सज्जनों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए निवेदन किया कि आप लोगों के सहयोग से ही गुरुकुल निरन्तर प्रगति कर रहा है अत: भविष्य में भी आप इसी प्रकार सहयोग देकर हमारा उत्साह बढाते रहिये। इस उत्सव में यदि किसी आगन्तुक को किसी प्रकार की असुविधा हुई हो तो उसके लिये हम क्षमा चाहते हैं तथा आगे से ध्यान रखेंगे।

तदनन्तर शान्तिपाठ के साथ उत्सव की कार्यवाही समाप्त हुई।

सुधारक का संवाददाता

महाभारत की सूक्तिसुधा..... पृष्ठ २१ का शेष

- अभक्ष्य पदार्थ खाने में अपना मन मत लगाओ।

❊ समानमेकपात्रे तुभुंभजेन्नाम्। अनु० १०४.८९।।

- किसी के साथ एक पात्र में भोजन न करे।

❊ असत्कृतमवज्ञातं न भोक्तव्यं कदाचन। अनु० १३५.१७।।

- अपमान और अवहेलना से मिला अन्न कभी नहीं खाना चाहिये।

❊ विश्वासं समयघ्नानां न यूयं गन्तुमर्हथ। शल्य० ६४.३०।।

अनुबन्ध तोड़ने वालों का विश्वास नहीं करना चाहिये।

❊ मावमंस्था: परान् राजन्नस्ति वीर्यं नरे नरे। सभा० २.२१।।

- हे राजन्! प्रत्येक मनुष्य में बल होता है, अत: किसी का अपमान मत करो।

❊ अवज्ञानं हि लोकेऽस्मिन् मरणादपि गर्हितम्। बन० २८.१२।।

- अपमान इस संसार में मृत्यु से भी अधिक निन्दनीय है।

❊ स्वयं प्राप्ते परिभवो भवतीति निश्चय:। अनु० ८२.१४।।

- निमन्त्रण के बिना किसी के पास जाने पर निश्चय से अनादर होता है।

❊ मात्मना विस्मयं गम: थादि० १३५.९।।

- अपने आप पर अभिमान मत करो।

❊ मानाभिभूतानचिराद् विनाश: समपद्यत। वन० ९४.१२।।

- जो अभिमान से लिप्त होता है, उसका शीघ्र विनाश हो जाता है।

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका की ओर से अभिनन्दन प्राप्त करते हुए विरजानन्द दैवकरणि

विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका की ओर से सम्मान प्राप्त करते हुए आचार्य विजयपाल योगार्थी

विक्रमादित्य प्रतिष्ठान अमेरिका की ओर से डॉ० धर्मवीर (मरणोपरान्त) का सम्मान प्राप्त करते हुए विरजानन्द दैवकरणि

वैदिक भजन प्रस्तुत करते हुए श्री रामनिवास जी आर्य

उत्सव में उपस्थित श्रोताजन

परमजीत पहलवान का स्वागत करते हुए गुरुकुल के अधिकारी आदि

स्वामी ब्रह्मानन्द जी प्रवचन करते हुए

स्वामी ओमानन्द सरस्वती विद्वत्पुरस्कार प्राप्त करते हुए विरजानन्द दैवकरणि

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

राष्ट्रकवि श्री सारस्वत मोहन मनीषी कविता पाठ द्वारा जनता को उत्साहित करते हुए

स्वामी ओमानन्द सरस्वती आर्य भजनोपदेशक पुरस्कार प्राप्त करते हुए श्री कुलदीप आर्य

स्वामी ओमानन्द सरस्वती नैष्ठिक ब्रह्मचारी का सम्मान प्राप्त करते हुए स्वामी धर्मपाल जी

यज्ञ के समय वेदापदेश देते हुए आचार्य विजयपाल योगार्थी

ऋग्वेद पारायण यज्ञ में आहुति प्रदान करते हुए यजमानदम्पती

वैदिक भजन प्रस्तुत करती हुई ब्रह्मचारिणी तन्नू आर्या

बेल तोड़ने का प्रदर्शन करते हुए नरेश कुमार शास्त्री

समतोला का प्रदर्शन करते हुए गुरुकुल के ब्रह्मचारी

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

व्यायाम का प्रदर्शन करने वाले ब्रह्मचारी

अग्नि के गोले से निकलता हुआ ब्रह्मचारी

मल्लखम्भ पर अभिवादन करता हुआ ब्रह्मचारी

व्यायाम प्रदर्शन करते हुए ब्रह्मचारी

व्यायाम प्रदर्शन करते हुए ब्रह्मचारी

छाती पर पत्थर रखकर तुड़वाते हुए नरेश कुमार शास्त्री

शक्ति के बल से चलती जीप को रोकते हुए नरेश कुमार शास्त्री

गले से सरिया मोड़ते हुए नरेश कुमार शास्त्री

गुरुकुल झज्जर के 105 वें उत्सव की चित्रमय झांकी

मल्लखम्भ पर स्तूप निर्माण करते हुए ब्रह्मचारी

गुरुकुल का ब्रह्मचारी प्रदर्शन करता हुआ

व्यायाम प्रदर्शन करते हुए गुरुकुल के ब्रह्मचारी

ढाल-तलवार का प्रदर्शन करते हुए ब्रह्मचारी

आर.एन.आई. द्वारा रजि. नं. 11757
पंजीकरण संख्या- P/RTK/85-B/2020-22

सुधारक लौटाने का पता :-
गुरुकुल झज्जर, जिला झज्जर (हरयाणा)-124103
E-mail : gurukuljhajjar@gmail.com

ग्राहक संख्या

श्री ____________

स्थान ____________

डा० ____________

जिला ____________

प्रकाशक आचार्य विजयपाल गुरुकुल झज्जर ने आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, दयानन्दमठ, गोहाना मार्ग, रोहतक में मुद्रक-डॉ० विक्रम सिंह शास्त्री के प्रबन्ध से छपवाया।